प्राचीन भारतीय इतिहास में पश्चिमोत्तर भारत का योगदान (प्रथम ईसवी सदी से तृतीय ईसवी सदी)

अनिल कुमार सिंह* & चन्द्र सोहन सिंह**
*शोधछात्र, प्राचीन भारतीय एवं एशियाई अध्ययन विभाग, मगध विश्वविद्यालय बोधगया।
**शोधछात्र, प्राचीन भारतीय एवं एशियाई अध्ययन विभाग, मगध विश्वविद्यालय बोधगया।

Received: March 08, 2018 Accepted: April 11, 2018

अफगानिस्तान और सिंध नदी का बंजर प्रदेश जो उत्तर में पामीर की पठार से अरब सागर के तट तक फैला है, भारत की उत्तर पश्चिमी सीमा है। ई.पू. प्रथम शताब्दी में पश्चिमोत्तर भारत से यूनानी राज्य का पतन हो गया तथा इस प्रदेश पर अन्य विदेशी जातियों यथा शकों, पहल्वों एवं कुषाणों ने अपने शासन की स्थापना की और गुप्तों के उदय के पूर्व भारतीय इतिहास में अपनी अमिट छाप छोड़ी और कला के क्षेत्र में एक स्वर्णिम अध्याय जोड़ा।

भारतीय शक–राजाओं में संभवतः प्रथम शासक मावेज था। तक्षशिला में मावेज का उत्तराधिकारी एजेज प्रथम था, जिसने मावेज के साम्राज्य को न केवल अक्षुण्य रखा वरन् उसने पूर्वी पंजाब में अपना साम्राज्य विस्तृत किया। एजेज प्रथम के बाद एजेज द्वितीय शासक बना। शकों ने भारत में शासन के लिए क्षत्रप–प्रणाली को अपनाया था। मथुरा के शक–क्षत्रपों में हगामस, राजुल और शोडास के नाम प्रमुख हैं। एक अन्य क्षरपल्लान का नामोल्लेख भी प्राप्त होता है। मथुरा शक–क्षत्रपों की अमूल्य देन मथुरा सिंह–शीर्ष की रचना है जिसमें ईरानी कला का प्रभाव परिलक्षित होता है। पश्चिमी भारत के शक–क्षत्रपों में दो शक शासन वंशों का अस्तित्व प्रमाणित होता है। क्षहरात शासन वंश तथा चष्टन शासक वंश। क्षहरात शासन–वंश के प्रमुख शासकों भूमक एवं नहपान के उल्लेख प्राप्त होते हैं। इसमें नहपान एक प्रतापी शासक था, जिसका साम्राज्य–विस्तार उत्तर में अजमेर तक था तथा इसमें काठियाबाड़, गुजराज, पश्चिमी मालवा, उत्तरी कोकण तथा नासिक एवं पूना के जिले सम्मिलित थे। शकों के चष्टन वंश में रूद्रदामन का शासन काल सर्वाधिक उल्लेखनीय था। पंजाब में भी तीन क्षत्रप–वंशों ने राज किया था। तक्षशिला ताम्रपत्र में कुसुलुक–वंश, मनिगुल–वंश एवं इन्द्रवर्मन–वंश इन तीन क्षत्रप वंशों का उल्लेख प्राप्त होता है।

रूद्रदामन के पश्चात् शक क्षत्रपों के इतिहास में कुछ उल्लेखनीय बात नहीं रह जाती। इसके बाद के शासकों के विषय में जानने के स्त्रोत अत्यन्त कम हैं तथा मुद्राओं की सहायता से केवल उनकी तिथियों तथा पूर्वानुपर–क्रम का निर्धारण किया जा सकता है। मुद्राओं से यह प्रदर्शित होता है कि रूद्रदामन के पश्चात् दामधसद सत्तारूढ़ हुआ; क्षत्रप के रूप में वह अपने पिता के प्रशासन में सहयोगी चुका था। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके भाई रूद्रसिंह प्रथम तथा उसके पुत्र जीवदामन ने 199 ईसवी तक शासन किया। लगभग 200 ईसवी में रूद्रसिंह प्रथम का पुत्र रूद्रसेन प्रथम महाक्षत्रप बना तथा 222 ईसवी तक शान किया। उसके पश्चात् उसके दो भाई सदामन (222–223 ईसवी) तथा दामसेन (223–36 ईसवी) महाक्षत्रप बने। अगला महाक्षत्रप दामसेन का पुत्र यशोदामन था। उसके पश्चात् उसके भाई विजयसेन (239–76 ई0) तथा दामजद श्री (251–55 ई0) शासक हुए। तत्पश्चात् रूद्रसेन द्वितीय (256–76 ई0) और उसके बाद उसके दो पुत्र विश्वसिंह तथा भर्तृदामन शासक बने।

इसके पश्चात् शक इतिहास में एक अन्धकार–युग आता है। 295 ई. तथा 340 ई. के बीच में शक शासन में कोई महाक्षत्रप नहीं आता। मुद्राओं से प्रदर्शित होता है कि चष्टन का शासन वंश 305 ई. में समाप्त हो गया और इस समय के पश्चात् विविध अन्य क्षत्रप तथा महाक्षत्रप उभरते दिखाई पड़ते हैं। 310–388 ई0 की तिथि अन्तिम तिथि है– जो रूद्रसिंह नामधीर शासक का है। इसी समय में यह प्रदेश गुप्तों द्वारा विजित हुआ। सम्भवतः रूद्रसिंह ही वह शासक था जो गुप्त शासक चन्द्रगुप्त द्वितीय द्वारा उन्मूलित हुआ था।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि शक शासकों का शासन प्रबन्ध उच्च कोटि का था। निःसन्देह प्रारम्भिक शक क्षत्रपों के नाम तथा विरुद उनके सिक्कों पर यूनानी, रोमन और खरोष्ठी लिपियों में अंकित किये जाते थे किन्तु पश्चिमी भारत के शक क्षत्रपों ने यूनानी रोमन लिपि के स्थान पर अपने सिक्कों पर एक अलंकृत बार्डर बना दिया और खरोष्ठी के स्थान पर ब्राह्मी लिपि का प्रयोग किया। इससे प्रकट होता है कि उन्होंने अपनी भारतीय प्रजा की भावनाओं का आदर करके अपने सिक्कों पर अंकित कराने के लिए भारतीय लिपि ही अपना ली। इनके अभिलेखों की भाषा भी संस्कृत मिश्रित प्रकृति की है। उषवदात ने भारतीय राजाओं के अनुरूप ही धार्मिक कार्यों के लिए पुष्कल दान दिया। यह दान ब्राह्मणों और बौद्धों दोनों सम्प्रदायों को दिया गया। इससे उसकी धार्मिक सहिष्णुता प्रकट होती है। रूद्रदामन के जूनागढ़ अभिलेख से स्पष्ट है कि वह आदर्श भारतीय शासक था। उसका शासन प्रबन्ध परम्परागत भारतीय शासन पद्धति पर आधारित था। अपनी प्रजा में उसने वर्ण–धर्म का पालन कराया और प्रजा से केवल वैध कर वसूल किये। ये शक शासक सिंचाई के साधनों को ठीक रखने का पूरा ध्यान रखते थे। उनके शासन में पूर्ण धार्मिक सहिष्णुता थी। वे धर्मशालाएँ, कुएँ, तालाब और उपवन बनाते थे। अनेक स्थानों पर प्याऊ बैठाते और नदियों पर पुल बनाते थे। उन्होंने अनेक स्थानों पर सभा भवन भी बनवायें। कभी–कभी सार्वजनिक निर्माण कार्यों के लिए सम्भवतः कुछ शक शासक बेगार भी लेते थे और कुछ नये कर भी लगाये जाते थे। सम्भवतः नमक खोदने का एकाधिकार शासकों का था। इन शासकों ने अपने शासन प्रबन्धन में ईरानी और भारतीय शासन पद्धतियों का सुन्दर समन्वय किया।

पहल्वों का प्रथम शासक वोनोनीज था जो शकराजा मावेज (ईसवी सदी के प्रारंभिक वर्षों में) का समकालीन था। इसका राज्य सीस्तान व अराकोशिया पर था। वोनोनीज के पश्चात् स्पैलिरिसिस पहल्व वंश का शासक बना। पहल्व वंश का सर्वाधिक शक्तिशाली एवं प्रसिद्ध शासक गोण्डोफार्निज हुआ जिसने 19ई0 से लेकर संभवतः 45 ई. तक राज किया। उसके सिक्कों से यह ज्ञात होता है कि वह पूर्वी ईरान व पश्चिमी भारत दोनों का ही शासक था। उसके पश्चात् ऐब्डगेसस व पकोरिस राजा बने, पर कुषाण–आक्रमण ने इस वंश का अंत कर दिया।

कुषाणों का प्रथम प्रमुख शासक कुजुल कैडफिसेस था। उसके पश्चात् उसका पुत्र विम कैडफिसेसे शासक बना। कुजुल जहाँ बौद्ध धर्म का अनुयायी था, विम वहीं शैषव धर्म का। विम की मृत्यु के उपरांत कुषाण–शासक लगभग 20 वर्षों तक संकट ग्रस्त रहा। 78ई. में कनिष्क कुषाण वंश की गद्दी पर बैठा। कनिष्क एक महान विजेता के साथ–साथ सांस्कृतिक उत्थान का पोषक भी था। बौद्ध धर्म की उसके संरक्षण में पर्याप्त उन्नति हुई। चतुर्थ बौद्ध–संगीति का आयोजन उसके शासन–काल की एक उल्लेखनीय घटना है। इसके परिणाम स्वरूप बौद्ध धर्म की महायान शाखा का उदय हुआ। कुषाण युग साहित्यिक क्रियाशीलता का भी युग था जिसका प्रमाण हमें अश्वघोष (बुद्ध चरित के रचयिता), नागार्जुन (शून्यवाद तथा सापेक्ष्यवाद के प्रवर्तक), पार्श्व, वासुमित्र, आयुर्वेद के जन्मदाता चरक तथा अन्य विद्वानों की कृतियों से भी प्राप्त होता है। कनिष्क एक महान निर्माता भी था। उसके शासन काल में अभूतपूर्व उन्नति हुई और गान्धार–कला के रूप में एक नवीन शैली का आविर्भाव हुआ। चौधरी महोदय की यह उक्ति बहुत ही सटीक है कि, ''कनिष्क के वंश ने भारतीय सभ्यता के लिए मध्य एवं पूर्वी एशिया का द्वार खोल दिया। कनिष्क के पश्चात् हुविष्क नाम के राजा ने राज किया। हुविष्क का राज्य काल कुषाण सम्वत् 28 से 60 तक का है, जैसा कि उसके अभिलेखों से प्रतीत होता है और उसका राज्य विस्तार कापिश तथा अफगानिस्तान से लेकर बिहार तक फैला हुआ था। इस शासक के सोने तथा तांबे के सिक्के मिले हैं जो विभिन्न प्रकार के हैं ओर उनपर बहुत से देवी–देवताओं की प्रतिमाएँ अलग–अलग अंकित हैं। उसके समय का 28 वर्ष का लेख विशेष महत्व रखता है। इस लेख में मध्य एशिया के एक स्थानीय शासक–वकन (वोस्त्रान) पति द्वारा किये गये दान का उल्लेख है जो उसने मथुरा में आकर ब्राह्मणों के लिए किया था। हुविष्क का राज्यकाल वास्तव में कुषाण इतिहास का स्वर्ण युग था जैसा कि उसके विभिन्न प्रकार के सिक्कों, विदेशिक सम्बन्धों तथा मथुरा में स्थापित इसके देवकुल से प्रतीत होता है। देवकुल में कदाचित् इसमें उसके पूर्वजों की मूर्तियाँ रखी गई होंगी। इसके 28–60 तक के राज्यकाल में एक कनिष्क (द्वितीय) का लेख मिलता है। कुछ विद्वानों का विचार है कि कनिष्क के समय में ही कुषाण साम्राज्य का विभाजन हो गया था। पश्चिमी भाग में बीजक तथा उसका पुत्र कुषाण द्वितीय था और पूर्वी पर हुविष्क का अधिकार था। बाद में हुविष्क सम्पूर्ण साम्राज्य का शासक हो गया। लेकिन इस विभाजन का किसी भी स्त्रोत से पता नहीं चलता है और यह सम्भव है कि वजिष्क तथा उसका पुत्र कनिष्क परवर्ती कुषाण वंशी रहे हों। इनके सिक्के भी मिले हैं। हुविष्क के समय से ही कुषाण शासकों की धार्मिक प्रवृत्ति हिन्दू धर्म की ओर बढ़ रही थी। इनकी मुद्राओं पर शिव तथा अम्बा (ननां) के चित्र उत्कीर्ण मिलते हैं। ब्राह्मण धर्म का भी पुनः उत्कर्ष हो रहा था। इस समय इस देश के अन्तिम शासक वासुदेव के नाम से इस तथ्य की पुष्टि होती है।

वासुदेव के लेख कुषाण सम्वत् 67–99 तक के मिले हैं। कदाचित् यही व्यक्ति था जिसने चीनी सम्राट को एक दूत भेजा था। कुछ विद्वान चीनी ग्रन्थ सन–कुओं–में में उल्लिखित पोहिआओं की समानता वासुदेव द्वितीय से करते हैं। बेग्राम के उत्खनन में भी इसी वासुदेव प्रथम के सिक्के मिले। इसके पश्चात् वहाँ पर शापुर का अधिकार हो गया। जिससे प्रतीत होता है कि इस अन्तिम कुषाण शासक के साथ ही कनिष्क के वंश का अंत हो गया। इस कुषाण शासक ने भी अपने काल के लेखों में 'महाराजाधिराज देवपुत्र' आदि उपाधियाँ धारण की हैं। इसके सिक्कों पर केवल शिव तथा अम्बा (ननां) की प्रतिमाएँ अंकित हैं। कुछ लेखों, सिक्कों तथा बेग्राम में उत्खनन से प्राप्त सामग्री से प्रतीत होता है कि यद्यपि कुषाण वंश का अन्त लगभग 242 ई. में हुआ पर थोड़े समय बाद परवर्ती कुषाणों ने पुनः राज्य स्थापित कर लिया।

उत्तरवर्ती कुषाण शासक

उत्तरवर्ती कुषाण शासकों की जानकारी हमकों मूलतः उनके सिक्कों तथा कुछ अभिलेखों से प्राप्त होती है। इन्हें कुषाण वंशज या कुषाण पुत्र के नाम से सम्बोधित किया जाता है जैसा कि मथुरा से प्राप्त एक लेख में उल्लिखित है। इन शासकों के इतिहास के विषय में किसी प्रकार की जानकारी नहीं है। लेखों के आधार पर ही इनके राज्यकाल की तिथि प्रस्तुत की जा सकती है। उनकी सम्बन्धित अभिलेख यद्यपि मथुरा ही से प्राप्त हुए हैं, पर इससे यह अनुमान नहीं लगाना चाहिए कि इस वंश के शासकों का अधिकार केवल मथुरा तक ही सीमित रहा होगा। सर्वप्रथम यहाँ सह प्राप्त शाही वमतक्ष के लेख को जायसवाल महोदय ने विम कदफिस का माना था। इस लेख में एक देवकुल की स्थापना का उल्लेख है जो एक वकनपति ने किया था। एक अन्य देवकुल का उल्लेख हुविष्क के समय के एक लेख में भी मिलता है। ये दोनों ही लेख मथुरा में माट नामक स्थान पर, जहाँ पर कई कुषाण लेख मिले हैं, से प्राप्त हुए हैं। इस वमतक्ष को 'कुषण पुत्र' कहा गया है। हो सकता है कि इस समय से तृतीय या उत्तरवर्ती कुषाण वंश की स्थापना हुई हो।

एक दूसरे कुषाण का उल्लेख, मथुरा से प्राप्त एक अन्य लेख से मिलता है जो सम्वत् 14 का है। यह दलपति की खिड़की नाम मोहल्ले में मिला था। इस लेख के अक्षर गुप्तकालीन पूर्वी क्षेत्रीय अक्षरों से मिलते हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि इस लेख का कनिष्क प्रसिद्ध प्रथम कनिष्क से भिन्न था। तिथि तथा सम्वत् के लिये 10 के अक्षर में भिन्नता है। इसलिए टामस महोदय का कथन है कि ये लेख कुषाण सम्वत् 104 का रहा होगा। मिराशी के अनुसार इसकी तिथि कुषाण सम्वत् 54 है। इससे भलीभाँति विदित है कि यह कनिष्क, कनिष्क प्रथम से भिन्न था। मिराशी के अनुसार इन कनिष्क के राज्यकाल में गृह युद्ध हुए होंगे और उसमें कनिष्क द्वितीय आरम्भ में सफल हुआ होगा और बाद में हार गया होगा और उसका राज्य मथुरा तक ही सीमित रह गया। स्टेनकोनों के मतानुसार कुषाण साम्राज्य दो भागों में बँट गया था। पश्चिमी भाग का शासक हुविष्क था और पूर्वी भाग पर वशिष्क का अधिकार था तथा उसके बाद उसका पुत्र कनिष्क द्वितीय यहाँ पर शासक हुआ। पर यह दोनों मत माननीय नहीं हैं क्योंकि हुविष्क के लेख अफगानिस्तान से मथुरा तक प्राप्त हुए हैं जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है और विभाजन का भी कहीं संकेत नहीं मिलता है। इसलिये यह कनिष्क उत्तरवर्ती कुषाण वंशी था तथा इसके बाद अरा के लेख का कनिष्क हुआ जिसे हम कनिष्क तृतीय कह सकते हैं। यह विशिष्क अथवा विजष्क अथवा विशिष्क का पुत्र था जिसका उल्लेख अरा लेख में है। इसलिए वशिष्क को भी हम उत्तरवर्ती कुषाण वंश में रख सकते

हैं। उसके कोई सिक्के नहीं मिले हैं। इस प्रकार इस वंश के शासकों में वमतक्ष, वशिष्क (वजिष्क) तथा कनिष्क द्वितीय को रख सकते हैं। इस वंश के शासकों ने लगभग 50 वर्ष तक राज किया होगा। पर यह कहना कठिन है कि कुषाणों का अन्त कब हुआ। समुद्रगुप्त के इलाहाबाद के लेख में इनकी उपाधियों वाले शासकों का उल्लेख है। कदाचित यही अन्तिम कुषाण रहे हों। कनिष्क के उत्तराधिकारी निर्बल सिद्ध हुए और अंततः 150 ई. के आस–पास कुषाण शासन का अंत हो गया।

इस प्रकार पश्चिमोत्तर भारत का भारतीय इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है, जो मौर्यों के पश्चात् और गुप्तों के उदय के पूर्व अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं। पश्चिमोत्तर भारत के इस अवधि के दरम्यान उदित विदेशी शक, पहल्व व कुषाण राज्य–वंशों का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक उपलब्धियों को नवीन परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण एवं नूतन तथ्यों के उद्घाटन हेतु मैंने इस विषयों को अपने शोध–अध्ययन के लिए चुना है।

संदर्भ ग्रंथ

1. के.ए. नीलकण्ठशास्त्री : कम्प्रीहेन्सिव हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, वो.–।। (1957)
2. डा. आर. भंडारकर – बैक्टर ऑन द एन्शिएण्ट हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, कलकत्ता युनिवर्सिटी ऑफ कलकत्ता, 1919
3. डा. कालूराम शर्मा एवं डा0 प्रकाश व्यास – प्राचीन भारत का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2004
4. महाजन, एस – पोलीटिकल एण्ड कल्चरल हिस्ट्री ऑफ एन्शिएण्ड इण्डिया, चाँ एण्ड कम्पनी, दिल्ली, 1962
5. एसी रॉ चौधरी – पोलीरटिकल हिस्ट्री ऑफ एनशिएण्ट इण्डिया (1950)।
6. बी.एन. लुनिया – प्राचीन भारतीय संस्कृति, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2009
7. राधाकृष्ण चौधरी – प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, भारती भवन, पटना, 1989

Education is the most powerful weapon which you can use to change the world.
~ Nelson Mandela